International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 14-01-2019; Accepted: 16-02-2019
www.socialsciencejournal.in
Volume 5; Issue 2; March 2019; Page No. 60-66

ब्रिटिशकालीन नारी : समाज सुधारको का योगदान

डॉ० संजय कुमार मिश्रा
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, एस०आर०पी० स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हनुमना, जिला रीवा, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
समाज सुधारकों का योगदान के संदर्भ में राजाराम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, स्वामी विवेकानन्द आदि के योगदान पर चर्चा की गई है। ब्रिटिश राज के दौरान भारतीय समाज के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढ़ाँचे में बहुत सारे परिवर्तन हो रहे थे। इस दौरान चाहे, अन–चाहे इस तरफ भी तरक्की हुई। महिलाओं के बीच शिक्षा, रोजगार, सामाजिक और राजनीतिक अधिकार में जो असमानता थी उसे दूर करने के प्रयास हो रहे थे। औद्योगीकरण, नगरीकरण और शिक्षा के साथ–साथ सामाजिक आंदोलनों ने महिलाओं की स्थिति में बहुत महत्वपूर्ण सुधार किये। औद्योगीकरण और नगरीकरण ने यातायात और संचार के माध्यमों को विकसित कर दिया था जिसके कारण हर तरफ नयी प्रवृत्ति, नये सामाजिक मापदंड खड़े हो रहे थे। शिक्षा को सबसे महत्वपूर्ण हथियार माना गया जिससे महिलाओं की स्थिति में ब्रिटिशकाल में सुधार हुआ।

मूल शब्द : ब्रिटिशकालीन नारी, समाज, सुधारक, योगदान।

प्रस्तावना
आधुनिक भारत के पिता माने जाने वाले राजा राम मोहन राय का जन्म ब्रिटिश इण्डिया में राधानगर बंगाल में 22 मई 1774 में हुआ था। वो धार्मिक, सामाजिक और शैक्षिक सुधारक थे और इसके साथ–साथ मानववादी थे जिन्होंने परम्परागत हिन्दु धर्म और संस्कृति पर गंभीर प्रयास किये। खासकर महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिये और उन्होंने इस बात का प्रयास किया कि भारत ब्रिटिशरूल के भीतर तरक्की करें। उन्हें नवीन भारत के निर्माणकर्त्ता या Maker of Mordern India साथ ही साथ उन्हें आधुनिक भारत का पिता, Father of Modern India भी कहा जाता है। उनको बंगाल में हुए सांस्कृतिक पुर्नजागरण का भी पिता कहकर पुकारा जाता है। राजा राम मोहन राय और द्वारकानाथ टैगोर तथा कुछ और बंगालियों ने मिलकर बह्म सभा जो बाद में ब्रह्म समाज के नाम से जानी गई की स्थापना 1828 में की। उन्होंने सामाजिक और धार्मिक सुधार आंदोलन बड़े पैमाने पर बंगाल के पुर्नजागरण के समय चलाया। उनका प्रभाव हमें राजनीति में नगरीय प्रशासन में, शिक्षा में, नारी सुधार में, यहां तक की धर्म में भी देखा जा सकता है।

रविन्द्रनाथ टैगोर ने उन्हें Father of Indian Renaissance और भारतीय राष्ट्रीयता का पैगम्बर कहा। राजा राम मोहन राय का जन्म एक बंगाली हिन्दु परिवार में राधानगर बंगाल में 22 मई 1774 को ब्राह्मण जाति में हुआ था। उनका पारिवारिक नाम राम राय बंधु उपाध्याय था। ये साण्डिल्य गौत्र के ब्राम्हण थें। इनके महान परदादा कृष्णाचन्द्र बनर्जी ने राय की उपाधी धारण की। उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि धार्मिक विभिन्नताओं से भरी हुई थी जहां उनके पिता रमाकान्तों राय वैष्णों धर्म के अनुयायी थे, वही उनकी माता तारा देवी एक शैव भक्त थी। उस समय यह बड़ा अजीब–सा था। क्योंकि तात्कालीन समय में वैष्णों धर्मावलंबियों की शादी शैव मत वालों से नही होती थी। इस कारण से राजा राम मोहन राय के मन और दिमाग में संप्रदाय निरपेक्षता उनके मन और हृदय में बस गये थे।

राजा राम मोहन राय ने तिब्बत और हिमालय की वादियों का भ्रमण किया था राजा राम मोहन राय की शुरूआत वेदान्तों के सिद्धांत से शुरू हुई थी। जैसा की वेदान्त के बारे में उपनिषद बताते है। उन्होंने ईश्वर की एकता पर बल दिया और वैदिक श्रुतियों को उन्होंने आंग्ल भाषा में रूपान्तरित भी किया। वे कलकत्ता यूनिटेरियन सोसायटी के सह संस्थापक भी रहे। उन्होनें 1828 में ब्रह्य समाज की नीवं डाली और सती प्रथा के खिलाफ आवाज उठाई। राजा राम मोहन राय ने प्रांरभ में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया की नौकरी की और 1815 में उन्होंने आत्मीय सभा की स्थापना की। उनका संघर्ष नारी शक्ति के उद्धार के लिये लगातार चलता रहा। उन्होनें यह भली भांती समझ लिया था। नारी शक्ति का प्रादुभार्व उच्च स्तर पर करना है तो उन्हें नारी के जीवन की विषमताओं, रूढ़ियो, अन्धविश्वासों के न केवल दूर करना होगा बल्कि नारी शिक्षा–दीक्षा पर भी उन्होनें ध्यान दिया, कुछ समाचार पत्रों का संचालन किया, ''संवाद कौमुदी'' और ''मिरात–उल–अखबार'' इसमें प्राचीन स्त्रियों के अधिकारों को बताया करते थे और उस दौर की स्त्रियों के लिये संघर्ष की आवाज इन समाचार पत्रों के माध्यम से बुलन्द की। उनकी प्रेरणा उनकी सुझ–बुझ और उनकी वाक निपुणता ने गवर्नर जर्नल विलयम बेन्टिक को इस बात के लिये राजी कर लिया था कि वे सती प्रथा का उन्मूलन करने के लिये विधेयक लाये और कानून बनाये और ऐसा 1829 में हो भी गया। सती प्रथा पर निषेध लगाते हुए, सती प्रथा को उन्मूलित कर दिया गया था। सती प्रथा का उन्मूलन नारी जागरण के समर्थन में एक बड़ा कदम साबित हुआ। हमेशा से नारकीय और अमानवीय रही इस प्रथा ने हिन्दुस्थान में स्त्रियों से जीने के अधिकार ही छिन लिये थे। इस तरह से वह पूरी तरह से पति पर निर्भर हुई। अतः पति की मृत्यु के बाद या तो उन्हें पति की चिता के साथ धधकती अग्नि की ज्वाला में अपनी आहूति दे देनी होती थी अथवा अपने जीवन को बदलना होता था।

राजा राम मोहन राय और अंग्रेज इस तरह से जाने अंजाने में हमारा फायदा कर गये। राजा राम मोहन राय 1830 में लन्दन गये, वो पहले ऐसे शिक्षित भारतीय थे जो पानी के जहाज द्वारा इंग्लैण्ड गये थे।[1] उस समय मुगल बादशाह अकबर द्वितीय के दूत बनकर वो इंग्लैण्ड गये थे। इसी समय उनको अकबर द्वितीय ने राजा की उपाधी दी। इस तरह से राम मोहन राय, राजा राम मोहन राय हो गये। राय ने फ्रांस की भी यात्रा की और 27 सितम्बर 1833 ब्रिटेन के ब्रिस्टल में मैनेन्जाइटिस से उनका देहान्त हो गया, पर उनके कार्य और उनकी सोच आगे देश

भक्तों को दिशा निर्देशित करती रही और आगे करती रहेगी।
वीरचन्द्र गांधी महुआ से थे इन्होनें स्त्री शिक्षा के लिये जबरजस्त वकालत की। 19वीं सदी के महान देशभक्त वीरचन्द्र गांधी, महात्मा गांधी के दोस्त थे और स्वामी विवेकानंद के समकलीन थे। वो और स्वामी विवेकानन्द दोनो ही शिकागो मे हुई पहली धर्म संसद में सम्मिलित हुए थे। वीरचन्द्र गांधी ने इसमें एक सिल्वर मेडल भी जीता था उनकी प्रतिमा आज भी जयपुर के जैन मंदिर में खड़ी है। स्त्री शिक्षा के लिये उनके योगदान को याद दिलाती है। उन्होंने स्त्री शिक्षा के लिये ''सोसायटी फॉर द एजुकेशन ऑफ वुमेन इन इण्डिया '' के बैनर के तहत बहुत सारी भारतीय महिलाओं को उच्च शिक्षा के लिये यू.एस.ए. भेजा। जैन लिटरेचर सोसायटी लन्दन में आज भी उनके विचार, उनके कथन और उनके अमेरिका और यूरोप मे दिये हुए 535 भाषण सुरक्षित हैं। वे भी स्वामी विवेकानंद की तरह 39 साल की कम उम्र में मृत्यु को प्राप्त हो गये।
महात्मा ज्योतिराव गोविन्द राव फूले जो महात्मा ज्योति राव फूले के नाम से ज्यादा जाने गये। एक चिन्तक, समाज सुधारक, लेखक, दार्शनिक, धर्मशास्त्री, प्रवक्ता, स्कॉलर, संपादक और महाराष्ट्र के क्रांतिकारी के रूप में ज्योति राव एक महान कार्यकर्ता थे। इनका जन्म 11 अप्रैल 1827 को हुआ। इनकी पत्नी सावित्री बाई फूले थी। ज्योति बा फूले और उनकी पत्नि सावित्री बाई फूले भारत में नारी शिक्षा के लिये आधार स्तम्भ की तरह थे वो और उनकी पत्नि ने सारी उम्र स्त्री शिक्षा, कृषि, विधवाओं की स्थिति को उठाना और जाति प्रथा तथा छुआछुत जैसी बीमारी को समाप्त करने के लिये ताउम्र लड़ते रहे। ज्योतिबा फूले को सबसे ज्यादा जाना गया उनके नारी को शिक्षित करने के प्रयासों के लिये। उन्होंने अपनी पत्नी को शिक्षित बनाया और उनकी पत्नि ने अगस्त 1848 में लड़कियों के लिये पहला स्कूल खोला। 24 सितम्बर 1873 को ज्योति बा फूले ने 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की और उसके पहले अध्यक्ष और पहले ट्रेजरार बने। इस 'सत्यशोधक' समाज का मुख्य उद्देश्य यही था कि नारी को किस प्रकार शिक्षित किया जाये और शुद्रों को बड़ी जाति के खासकर ब्राह्मणो के उत्पीड़न से कैसे बचाया जाये।
सतारा माली परिवार में जन्में ज्योतिबा फूले के ऊपर बायोग्राफी लिखने वाले धनंजय वीर ने उन्हें भारत में सामाजिक क्रांन्ति का पितामह कहा है।[2] फूले की स्त्रियों के प्रति क्या सोच थी? यह इसी से पता चलता है कि 'सत्य शोधक' के अंतर्गत उन्होने एक महिला शाखा अलग से स्थपित की। जिसकी मुखिया उनकी पत्नि सावित्री बाई फूले बनी। उनका यह प्रयोग कितना सफल था यह इसी से पता चल जाता है। कि उनकी महिला शाखा में 19वीं सदी के अंधकारमय समय में भी 90 महिलाओं ने 'सत्य शोधक समाज' की सदस्य बनी। ज्योति बा जाति प्रथा और नारी शिक्षा के प्रति एक आधार स्तम्भ की तरह खड़े रहे और एक लड़ाके की भांति सारी उम्र महिलाओं और शुद्रो को उनका स्थान देने के लिये डटे रहे। ज्योतिबा पर थामस पेन की किताब 'Rights of men' का बहुत ज्यादा प्रभाव था और फूले ने इसी किताब के प्रभाव से सामाजिक न्याय का एक अच्छा खासा खाँचा खीचा और न ज्योति बा फूले अपने लक्ष्य से डिगे और न उनकी पत्नी और ''सत्यशोधक समाज' के माध्यम से नारी शिक्षा और छुआछूत की बीमारी को दूर करने के लिये आजीवन लड़ते ही रहे।[3] ज्योतिबा फूले कितने महान थे यह इसी से समझ लेना चाहिए कि उन्होनें सारी उम्र ब्राम्हणों के खिलाफ लड़ाई लड़ी लेकिन उन्होनें एक ब्राम्हण बच्चे को ही अपने बेटे के रूप में गोद लिया था और अपनी ढ़ेर सारी सम्पत्ति अपनी वसीयत उस बच्चे के नाम कर दी थी।
नारी शिक्षा और कमजोर वर्ग के उत्थान के लिये फूले के योगदान को कही–न–कही आज भुला दिया गया है और सारी उम्र सादगी से रहने वाले ज्योतिबा फूले की जगह डॉ. भीमराव अम्बेडकर जैसे लोगो को महत्ता प्रदान कर दी गई है। लेकिन जब–जब इतिहास कोई पढ़ेगा तब–तब ज्योति बा फूले और सावित्री बाई फूले एक दिवा स्तम्भ की तरह हमारे मार्ग को आलोकित करते रहेंगें।[4]
दयानन्द सरस्वती जिन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। उनका जन्म गुजरात के तनकाडा काढ़ियावाड़ (अब गुजरात का राजकोट जिला) में 12 फरवरी 1824 को हुआ। उनका असली नाम मूल शंकर था। उनके पिता का नाम कृष्णा जी, लालजी तिवारी और उनकी माता यशोदा बाई थी वे एक ब्राम्हण परिवार से थे उनके पिता जो कि एक टैक्स कलेक्टर थे काफी धनी, अग्रणी और सामाजिक प्रभाव वाले व्यक्ति थे। मूल शंकर के पिता शिव भक्त थे और उन्होंने उन्हें भी शिव को खुश करने के तरीके बताये। उन्हें व्रत रखने के महत्व के बारे में भी बताया गया। एक बार शिव रात्री के समय दयानन्द सारी रात जागकर भगवान शंकर की आराधना करते रहे। इसी तरह से उनकी आराधना चलती रही और ऐसी ही एक रात्रि उन्होंने एक चूहे को देखा कि वह शंकर जी पर चढ़ाये गये प्रसाद को दौड़ भाग कर बड़े आराम से खा रहा है। उन्होंने अपने आप से प्रश्न किया कि जब भगवान शिव की मूर्ति एक चूहे से अपनी रक्षा नही कर सकती तो शिव अपने भक्तों की सुरक्षा कैसे करेगे यही से मूर्ति पूजा पर से उनका विश्वास उठ गया।
स्वामी दयानंद ने महिला शिक्षा के लिये काफी प्रयास किये और स्वामी दयानंद सरस्वती पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होनें नारा दिया कि ''वेदो की ओर लौट चलो' इस तरह से उन्होंने महिलाओं को जिनको अभी तक गायत्री मंत्र पढने का अधिकार नही दिया गया था। उन्हें गायत्री मंत्र पढ़ने का अधिकार दिया। साथ ही साथ उन्होनें कन्याओं के लिये भी 'यज्ञोपवित' की व्यवस्था की, जबकि अभी तक सिर्फ तीन वर्णो में पुरूषों की ''यज्ञोपवीत'' संस्कार करने का अधिकार दिया गया था। दयानंद ने यह अधिकार महिलओं को भी दिया। इस तरह से हिन्दू धर्म में धार्मिक दृष्टि से नारियों को मजबूत करने का कार्य कठिन और श्रम साध्य कार्य किया।[5] महिला को सचमूच पुरूषों के बराबर लाने के लिये यदि किसी धार्मिक दृष्टि से प्रयास किया तो वो स्वामी दयानंद सरस्वती ही थे।
विवेकानंद का जन्म ब्रिटिश इण्डिया की राजधानी कलकत्ता के गुरमोहन मुखर्जी स्ट्रीट पर स्थित एक मकान में मकर संक्राति के त्यौहार के दौरान हुआ था।[6] वो एक बंगाली कायस्थ परिवार से आते थे और अपने माता–पिता के नौ बच्चों में से एक थे। उनके पिता विश्वनाथ दत्त कलकत्ता हाईकोर्ट में एटार्नी थे।[7] दुर्गाचरण दत्त नरेन्द्र के दादा जी थे और वो संस्कृत और फारसी के एक बड़े विद्ववान में से थे। उन्होनें 25 साल की उम्र में अपना घर–बार परिवार त्याग कर एक साधु बन गये।[8] नरेन्द्र की माता भुवनेश्वरी देवी एक धार्मिक गृहणी थी। अग्रणी और नवीन सोच वाले विश्वनाथ दत्त जो कि नरेन्द्र के पिता थे और धार्मिकता से भरी उनकी माता का प्रभाव नरेन्द्र पर बहुत ज्यादा पड़ा और उन दोनों के व्यक्तित्व ने स्वामी विवेकानंद के व्यक्तित्व निर्माण और उनकी सोच में महत्वपूर्ण योगदान दिया।
नरेन्द्र अपने युवावस्था से ही आध्यामिकता की ओर झुके हुए थे और वो भगवान राम, सीता, शंकर और काली माँ की मूर्तियों के आगे ध्यान लगाया करते थे। वो घुमक्कड़ साधुओं से अति प्रभावित थे। वास्तव में नरेन्द्र अपने बचपन में बहुत ही चंचल और शरारती बच्चे थे और अक्सर उनके माता–पिता को उनको नियंत्रण में रखने में बहुत मेहनत करने पड़ती थी। उनकी माता ने कहा था कि मैंने शंकर भगवान से एक बार पुत्र की मांग की थी और उन्होंने मुझे अपने भूत गणों में से एक को भेज दिया।
1873 में नरेन्द्र ने ईश्वरचन्द्र विद्यासागर मेट्रो पोलिटन इन्स्टीट्यूशन में पढ़ाई की और बाद में उन्होनें प्रेसीडेन्सी एनट्रेन्स

एक्समिनेशन प्रथम श्रेणी के अंको से उत्तीर्ण की। उस साल वे अकेले ऐसे छात्र थे जो कि प्रथम श्रेणी में उत्तीण हुये थे। नरेन्द्र या नरेन पढ़ने के बहुत शौकिन थे और तमाम तरह के विषयों को वो अपने पाठ्यक्रम की सीमा लांघकर पढ़ना चाहते थे। उन्होनें दर्शन, धर्म, इतिहास, सामाजिक विज्ञान, कला एवं साहित्य को बहुत अच्छे से पढ़ा था। वो प्राचीन हिन्दु धार्मिक ग्रंथो के प्रति भी बड़े उत्सुक थे और उन्होंने वेद, उपनिषद, भगवत गीता, रामायण, महाभारत और पुराण को पढ़कर लगभग कण्ठस्थ कर लिया था। नरेन्द्र भारतीय शास्त्रीय संगीत में निपुण थे और वे रोजाना शारीरिक कसरत, खेलों में भाग लिया करते थे। नरेन्द्र ने तर्क शास्त्र को भी पढ़ा और पश्चिमी दर्शन और यूरोपियन इतिहास में उन्होंने जनरल असेम्बली इन्स्टीट्यूशन (अब स्काटिश चर्च कॉलेज) में 1881 में फाईन आर्टस की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और अपनी स्नातक की पढाई उन्होंने 1884 में पूरी की। इन्होनें डेविड हूम, कान्ट, स्पीनोजा, हीगल, अगस्त काम्टे, जॉन स्टूअर्ट नील, जार्ज डार्वीन को बहुत अच्छे से पढ़ा था। वो हर्बट स्पेन्सर से काफी प्रभावित थे और उन्होने उनसे सम्पर्क भी किया।

सबसे ज्यादा अर्थपूर्ण और लम्बा सामाजिक आंदोलन जो अभी भी चल रहा है वो नारियों के उत्थान से संबधित है, उनकी जिन्दगी को बेहतर बनाने की कोशिश लगातार जारी है परन्तु भारत जैसे देश में देखते है सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्य में महिलाओं को दोयम दर्जा दिया गया है। स्वामी विवेकानंद इस चीज के बड़े खिलाफ थे और इसके खिलाफ उन्होंने अपनी आवाज बुलन्द की। स्वामी विवेकानंद स्त्रियों की कितनी इज्जत करते थे कि कि उन्होनें सीता जी को पूर्णता का चिन्ह माना था जो कि भारतीय महिलाओं के लिये एक प्रेरणा स्त्रोत था। वो हमेशा ग्लोरियस रही और पवित्रता की साक्षात मूर्ति थी। उन्होनें जितना धीरज के साथ अपनी सारी पीड़ा को सहा वो आज भी भारतीय नारियों के लिये एक आदर्श होना चाहिए। उन्होनें यहां तक कह दिया कि सारा हिन्दु धर्म युग गुम हो जाये यहाँ तक कि वेद और संस्कृत भाषा भी हमसे छिन जाये। हिन्दु धर्म का सब कुछ नष्ट हो जाये तब भी यदि पांच हिन्दु जिन्दा रहते है तब भी सीता जी की कहानी और उनका आदर्श जिन्दा रहेगा। स्वामी विवेकानंद एक ऐसे व्यक्तित्व हुए जिन्होनें नारी को कमजोर माना ही नहीं, उन्होंने भारतीय नारी को बहुत ऊंचा दर्जा दिया और भारतीय नारियों की खासियत उनकी सेवा भावना, उनके समर्पण, उनके प्यार, त्याग की जमकर प्रशंसा की। स्वामी जी ने स्पष्ट कहा था कि नारी उत्थान सीता के पद चिन्हों पर चलकर ही होगा। उन्होंने स्पष्टतया यह कहा कि कोई भी राष्ट्र तब तक प्रगति नहीं कर सकता जब तक कि वह अपनी देश की महिलाओं की हितों की पूर्ति नहीं कर सकता। उन्होनें कहा हर राष्ट्र तब तक महान नही बनेगा जब तक वह नारी का सम्मान करना नही सिखेगा। जो देश नारी का सम्मान नहीं करता वह कभी भी महान नही होता और न कभी भी भविष्य में महान बन सकता है।

स्वामी विवेकानंद ने भारतीय नारियों के लिये निश्चित रूप से कहा कि उनको स्वतंत्रता और स्वतंत्र जिन्दगी जीने की आजादी मिलनी चाहिए। उनके पास निश्चित रूप से निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए। भारत तभी उन्नति कर सकता है जब वह महिलाओं का सम्मान करना सीख जायेगा।[9]

बाबा आमटे (26 दिसम्बर 1914.....9फरवरी 2008) एक सेवक, सामाजिक कार्यकर्ता जो अपने कुष्ठ रोगियों के प्रति उनके पुनर्वास के प्रति अत्यंत समर्पित रहे। उन्होनें कुछ समय महात्मा गांधी जी के सेवाग्राम आश्रम में भी बिताया था और वे गांधी जी के अनुयायी बन गये और जीवनभर उनके अनुयायी रहे। वो गांधी जी के ग्रामीण उत्थान से जिसमें महिलाओं की सशक्त भूमिका हो से बहुत प्रभावित थे और उन्होनें इसी पृष्ठभूमि पर अपना आश्रम खोला। कोढ़ियों के लिये उन्होंने समर्पित भाव से सेवा की, वे महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के बहुत हिमायती थे और गांधी जी की ही तरह चरखा चलाने पर विश्वास करते थे और हमेशा खादी ही पहनते थे।[10]

ईश्वरचन्द्र विद्या सागर (1820–1891) एक दार्शनिक एकेडमिशयन, शिक्षाविद, लेखक, अनुवाद, प्रिन्टर, पब्लिशर, इन्टरप्रेनेओर, अभिनेता, क्रिकेटर, समाज सुधारक, सब कुछ या कहा जाये सर्वगुण सम्पन्न (Jack of all treades) उनके प्रयासों से बंगला समाज (बंगाल के) ने बहुत तरक्की की। वो बंगाल के पुर्नजागरण में मुख्य नायक की तरह थे। ईश्वरचंद्र विद्या सागर जाने जाते है महिलाओं की स्थिति के उत्थान के लिये। उन्होंने सारा जीवन महिलाओं के लिये समर्पित कर दिया। दूसरे सुधारको की तरह जिन्होनें दूसरे समाज या तरीके अपनाये। ईश्वरचन्द्र विद्या सागर ने हिन्दु समाज मे बिना छेड़छाड़ किये ही नारी की स्थिति में सुधार लाने का प्रयत्न किया और इसमें वो सफल भी रहे। बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी ईश्वरचन्द्र विद्या सागर ने महिलाओं की अनेक समस्याओं को जांचा परखा और उसे दूर करने का प्रयास किया। उन्होनें विधवाओं के जीवन को सुधारने के लिये अकथनीय प्रायास किये और विधवा पुर्नविवाह को हर तरह से स्वीकार योग्य बनाया। उन्होंने बाल–विवाह जैसी कुरीतियों के खिलाफ आवाज उठाई और उनके ही प्रयासों से बाल विवाह को रोकने के लिये कानून बना। ईश्वरचन्द्र विद्या सागर ने महिलाओं की पढ़ाई लिखाई के प्रति गजब का उत्साह दिखाया उन्होंने खुद महिलाओं को पढ़ाया और लोगो को भी प्रोत्साहित किया कि वो महिला शिक्षा को प्रोत्साहन दे। ईश्वरचन्द्र विद्या सागर जैस जीवित व्यक्तित्व वाले लोग बहुत कम होते है।[11]

धोन्धो केशव करवे (18 अप्रैल 1858–9 नवम्बर 1962) अपने समय के एक बहुत बड़े समाज सुधारक महिला कल्याण के लिये हुए। धोन्धो केशव करवे उन आधार स्तम्भों में से एक है जिन्होनें बड़े उत्साह और लगन के साथ विधवाओं को पुर्नविवाह करने के लिये प्रोत्साहित भी किया। भारत सरकार ने उनके नारी उत्थान के प्रयत्नों को सराहा, रिकोग्नाइज किया और उन्हें भारत का सर्वोच्च नागरिक पुरुष्कार भारत रत्न 1958 में प्रदान किया।

पं. रमा बाई (जन्म 23 अप्रैल 1858 मृत्यु 5 अप्रैल 1922) पं. रमा बाई प्रख्यात विदुषी समाज सुधारक और भारतीय नारियों को उनकी पिछड़ी हुई स्थिति से ऊपर उठाने के लिये समर्पित थी। पं. रमा बाई का जन्म 23 अप्रैल 1858 में मैसूर रियासत में हुआ था। इनके पिता आनंद शास्त्री विद्वान और स्त्री शिक्षा के समर्थक थे परन्तु उस समय की पारिवारिक रूढ़ीवादिता इसमें बाधा बनी रही। पिता रमा के बचपन में ही साधु संतो की मेहमानदारी के कारण निर्धन हो गये और पत्नि और रमा की एक बहन और भाई के साथ गांव–गांव में पौराणिक गाथाएं सुनाकर पेट पालना पड़ा।[12]

रमा बाई असाधरण प्रतिभावान थी, अपने पिता से संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करके 12 वर्ष की उम्र में ही 20 हजार श्लोक कंठस्थ कर लिये। देशाटन के करण रमा बाई ने मराठी के साथ–साथ कन्नड, हिन्दी तथा बंगला भाषाएं भी सिख ली थी। उनके संस्कृत के ज्ञान के लिये रमा बाई को सरस्वती और पंडिता की उपाधियाँ प्राप्त हुई तभी से वे पंडिता रमाबाई के नाम से जानी गई। 1876–77 के भीषण अकाल में दुर्बल पिता और माता का शीघ्र देहान्त हो गया, अब ये बच्चे पैदल ही भटकते रहे और 3 वर्ष में इन्होनें 4 हजार मील की यात्रा की। 22 वर्ष की उम्र में रमा बाई कोलकाता पहुची जहां उन्होंने बाल विधवाओं और विधवाओं की दैयनीय दशा सुधारने का बीड़ा उठाया। उनके संस्कृत ज्ञान और भाषणों से बंगाल के समाज में हलचल मच गई। भाई की मृत्यु के बाद रमा बाई ने विपिन बिहारी नाम के एक अछुत जाति के वकील से विवाह किया। जिससे उन्हें एक

नन्ही बच्ची पैदा हुई लेकिन उसके पैदा होने के डेढ वर्ष बाद ही हैजे की बीमारी के कारण उनके पति की भी मृत्यु हो गई। अछुत से विवाह करने के कारण रमा बाई को कट्टर पंथीयों के आक्रोश का सामना करना पड़ा लेकिन वह इससे जरा भी नही डरी और न अपने कर्तव्य पद से जरा भी डिगी और वह पूना आकर स्त्री शिक्षा के काम में लग गई, उनके द्वारा स्थापित संस्था आर्य महिला समाज की शीघ्र ही समुचे महाराष्ट्र में शाखाएं खुल गई।[13]

अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिये पं. रमा बाई 1883 ईस्वी. में इंग्लैण्ड गई, वह 2 वर्ष तक संस्कृत की प्रोफेसर रहने के बाद वें अमेरिका पहुंची। उन्होंने इंग्लैण्ड में ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। अमेरिका में उनके प्रयत्न से रमा बाई एसोसियन बना जिसने भारत की विधवा आश्रम का 10 वर्ष तक खर्च चलाने का जिम्मा लिया। इसके बाद वे 1889 में भारत लौटी और विधवाओं के लिये शारदा सदन की स्थापना की। बाद में कृपा सदन नाम एक और महिला आश्रम उन्होने बनवाया। पं. रमा बाई के इन आश्रमों में अनाथ और पीड़ित महिलाओं को ऐसी शिक्षा दी जाती थी जिससे वे स्वयं अपनी जीविका उपार्जित कर सके। पं. रमा बाई का जीवन इस बात का प्रमाण है कि यदि व्यक्ति दृढ़ निश्चय कर ले तो गरीबी, अभाव, दुर्दशा की स्थिति पर विजय प्राप्त करके वह अपने लक्ष्य की ओर बढ़ सकता है। उनकी सफलता का रहस्य था प्रतिकूल परिस्थितियों में साहस के साथ संघर्ष करते रहना। 5 अप्रैल 1922 को पं. रमा बाई का देहान्त हो गया।[14]

बाल शास्त्री जाम्भेकर (6 जनवरी 1812 18 मई 1846) मराठी अखबारिता के पितामह माने जाते हैं, उन्होंने मराठी में अखबार निकालने के प्रयास किये और इस तरह से उन्होनें मराठी भाषा का पहला समाचार–पत्र 'दर्पण' निकाला जिसके वे स्वयं संपादक थे, ब्रिटिश राज के प्रारंभिक दिनों में ही उन्होंने ''दर्पण'' समाचार पत्र के माध्यम से नारी समाज और मराठी समाज में जन जाग्रति लाने का कार्य किया। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी बाल शास्त्री जाम्भेकर को मराठी, संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी लैटिन, फ्रेन्च, गुजराती और बंगाली भाषाओं पर पूर्ण अधिकार प्राप्त था। दुर्भाग्य से बालशास्त्री जाम्भेकर का 34 वर्ष की छोटी सी उम्र में निधन हो गया।

कुन्दुकुरी वीरसा लिंगम का जन्म 16 अप्रैल 1848 को हुआ था। वह एक समाज सुधारक थे और तेलगु समाज और तेलगु साहित्य में पुर्नजागरण लाने का श्रेय उन्हें ही जाता है। वह ब्रम्ह समाज के सिद्धांतो से खासकर केशवचन्द्र के सिद्धांतो से प्रभावित थे। वह समाज सुधार के कार्यों से गहरे तक जुड़ गये, 1876 में उन्होनें एक तेलगु समाचार पत्र निकालना शुरू किया और पहला ''गद्य'' उन्होंने नारी के लिये लिखा, उन्होंने ने नारी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये बहुत सारे कार्य किये। उन्हीं में से एक था महिलाओं के लिये 1874 एक स्कूल स्थापित करना। उन्होने सब कार्यो के लिये एक सामाजिक संस्था 'हितकारणी' के नाम से बनायी । दुर्भाग्यवश 27 मई 1919 को उनका देहान्त हो गया।[15]

आचार्य श्री राम चन्द्र शर्मा (20 सितम्बर 1911– 2 जून 1990) गायत्री परिवर के संस्थापक और एक धीर–गंभीर पंडित्यपूर्ण भारतीय समाज सेवी थे, साथ–ही–साथ वे एक दार्शनिक भी थे और एक नये दौर का स्वप्न देखने वाले विजनरी भी थे। उन्होंने अपनी पूरी जिंदगी लोगो के लिये, उनके चारित्रिक सांस्कृतिक और नैतिक परिवेश सुधारने के लिये अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया। उन्होंने धार्मिक ग्रंथो में जो आध्यात्मिकता थी उसको इस तरह से ग्रहण किया और उसको प्रदर्शित किया कि वह आधुनिक युग की बहुत सारी समस्या को हल करने में भी सहायक सिद्ध होगी। आचार्य श्री रामचन्द्र शर्मा ने दयानंद सरस्वती के रास्ते पर चलते हुए महिलाओं और पुरूषों को बराबरी का दर्जा दिया और स्त्रियों के लिये उन्होंने पुरूषों जैसी संस्कार की व्यवस्था की और गायत्री परिवार के अंतर्गत स्त्रियां को भी ''यज्ञोपवीत'' संस्कार करने की बात कही और साथ ही उन्होंने स्त्रियों को गायत्री मंत्र पढ़ने और यज्ञ में भाग लेने के लिये कहा जो कि बहुत बड़ा क्रांतिकारी कदम था क्योंकि स्त्रियों की ''यज्ञोपवीत'' संस्कार की इजाजत नही थी और ब्राम्हण रूढ़ीवादियों नें उन्हें गायत्री मंत्र पढ़ने अैर यज्ञ करने के अधिकार से भी वंचित कर दिया था। आचार्य श्री राम चन्द्र शर्मा ने अपने चरित्र, अपने पांडित्य से रूढ़ीवादी ब्राम्हणों के साथ शास्त्रार्थ करके इन रूढ़ीवादी पंडितों को विवश कर दिया कि स्त्रियों को गायत्री मंत्र पढ़ने की और यज्ञ में भाग लेने की आजादी देना पड़ा। इसी तरह वेदों का भी उन्होनें स्त्रियों को अध्ययन करने की छूट दी। उन्होंने युग निर्माण योजना का स्वप्न देखा जहां नारी बंधन से विमुक्त होगी और पुरूष की तरह ही स्वतंत्र और अधिकार वाली होगी।[16]

जमुनालाल बजाज (4नवम्बर 1884–11 फरवरी 1942) एक उद्योगपति और भारतीय स्वतंत्रता के संघर्ष के एक सिपाही थे। गांधी जी ने उन्हें अपने बेटे के रूप में गोद ले लिया था। जमुनालाल बजाज वैसे तो खादी को प्रोत्साहित करने के लिये और गाँव में लघु उद्योग स्थापित करने के लिये जाने जाते है लेकिन उन्होनें अछुतोद्धार और स्त्री शिक्षा के लिये बहुत काम किया। उन्होंने अछुतों के मंदिर में प्रवेश निषेध होने के विरूद्ध बड़ी लड़ाई लड़ी। उन्होंनें एक अभियान शुरू किया, हरिजनों के साथ खाने का। जो कि अपने समय के हिसाब से अत्याधिक क्रांतिकारी कदम थे। जुमनालाल बजाज जिंदगी भर स्त्रियों के लिये, गरीबों के लिये शुद्रों के लिये लड़ते रहे और अपने मरते–मरते उन्होंने अपने नाम से एक पुरुस्कार ''जमुनालाल बजाज'' पुरुस्कार भी स्थापित किया गया जमुनालाल फाउण्डेशन द्वारा।[17]

महात्मा गांधी मोहनदास करमचंद गांधी जो बापू या महात्मा गांधी के नाम से प्रसिद्ध हुए। न केवल भारतीय स्वतंत्रता आंन्दोलन के सबसे बड़े और महानतम नेता थे। वे इससे भी बढ़कर एक बहुत बडे समाज सुधारक थे जिन्होंने महिलाओं के लिये, दलितों के लियें, तथा हिन्दु मुस्लिम एकता के लिये जीवनभर कार्य करते रहे। इन्होंने महिलाओं के खिलाफ हो रहे दुराचारो और प्रथाओं जो युगों से चले आ रहे थे। गांधी जी ने इन गलत सामाजिक प्रथाओं का खुलकर विरोध किया और महिलाओं का आहवाहन किया कि वे घर की चार दिवारी तोड़कर भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भाग लें। गांधी जी के आश्रम में सबसे प्रमुख भूमिका निभाने वाली महिलायें ही थी उन्होंने स्पष्टतया कहा था कि यदि आप महिलाओं का सम्मान करना नही सीख सकते तो भारत कभी भी महान नही बन सकता। भारतीय महिलाओं ने युगों–युगों से यह त्याग और समर्पण दिखाया है उसकी इज्जत करने के लिये गांधी जी ने लोगो से कहा महिलाओं के विरूद्ध हो रहे अत्याचार और उनके साथ चल रही कुप्रथाओं जैसे बाल–विवाह, विधवाओं की स्थिति, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा के लिये इन्होंने बुलन्द स्वर में आवाज उठायी इन कुप्रथाओं को दूर करने के लिये लोागो को, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी के योगदान का वर्णन करते हुये के.एएम. पणिकर लिखते है कि ''महात्मा गांधी ने भारतीय राष्ट्रवाद को जो बौद्धिक वर्ग तक ही सीमित था एक क्रांतिकारी जन आंदोलन का रूप दिया। इस आंदोलन में सामाजिक न्याय की भावना, समानता की इच्छा और दलित वर्ग में मुक्ति की चाह उत्पन्ना की।'' गांधी जी के आंदोलनों में नारियों का उत्थान, गृह उद्योग का प्रचार, करघा चलाना तथा मद्य निषेध जैसे रचनात्मक कार्य थे।

गांधी जी के अहिंसात्मक आंदोलन के जो प्रमुख पहलू थे उसमें सत्याग्रह आंदोलन, असहयोग आंदोलन, खिलाफत आंदोलन, नमक सत्याग्रह तथा 1942 का भारत छोड़ों आंदोलन सबसे

महत्वपूर्ण राजनीतिक कार्यक्रम रहे थे। गांधी युग का प्रारंभ 1919 से माना जाता है और इसमें उन्होंने सभी अहिंसात्मक पहलुओं पर प्रयोगात्मक आंदोलन शुरू किया।[18] यद्यपि सत्याग्रह का प्रयोग 1915 के पश्चात उन्होंने कई बार किया। चम्पारण में कृषक वर्ग के असंतोष के समय उन्होंने सत्याग्रह की बात की। इसी प्रकार गुजरात के खेड़ा में जहाँ लगान वापसी के लिये सत्याग्रह किया वहीं उन्होंने साबरमती आश्रम की स्थापना भी की और अहमदाबाद के मिल मालिकों से श्रमिकों के न्याय के लिये सत्याग्रह किया तत्पश्चात् उन्होंने रोलेक्ट ऐक्ट के विरूद्ध सत्याग्रह किया। 1920 के काँग्रेस अधिवेशन में असहयोग आंदोलन संबंधी प्रस्ताव पारित हो गया।[19]

1920 में गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध पहला आंदोलन चलाया। कूपलैण्ड के शब्दों में ''महात्माजी के इस आंदोलन ने राष्ट्रीय आंदोलन को जन–आंदोलन का रूप दिया।'' 1920 के पश्चात् ही धीरे–धीरे भारतीय समाज की महिलायें गांधी के आंदोलनों में शरीक होती गयी। 1930 के साबरमती आश्रम से दाण्डी–यात्रा में बड़ी संख्या में महिला आन्दोलनकारियों ने भाग लिया था। भारतीय महिलायें जहाँ एक ओर नारी की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को ऊपर उठाने में लगी हुई थी वही दूसरी ओर गांधी जी के रचनात्मक सामाजिक आंदोलन में जुड़ी हुई थी। 1920 के असहयोग आंदोलन, 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन और 'करो या मरो' के संदेश को न सिर्फ बहादुरी से आगे बढ़ाया बल्कि महिलाएँ अपनी शहादत में भी पीछे नहीं रही। सरोजनी नायडू, सुभद्रा कुमारी चौहान, कुस्तूरबा एवम् विजय लक्ष्मी पंडित जैसी महिलायें भारतीय राजनीति में अग्रणी रही। राष्ट्रीय आंदोलन में जिन महिलाओं ने गांधी युग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई उनमें सरोजनी नायडू का नाम उल्लेखनीय है। 1925 में सरोजनी नायडू कानपुर अधिवेशन में अध्यक्ष चुनी गयी इस पद को ऐनी बेसेंट इससे पहले सुशोभित कर चुकी थी। इस पर पर श्रीमती नायडू का चुना जाना न सिर्फ गौरव का बात थी बल्कि वह पहली भारतीय महिला भी थी। एक साल बाद 1926 में वह इस पद पर द्वारा चुनी गयी और भारतीय स्त्रियों का सम्मान बढ़ाया, सरोजनी नायडू 1928 में अमेरिका गयी और वहां गाधी जी के संदेश को लोगो तक पहुंचाया। वहां से लौटकर नमक सत्याग्रह में शामिल हुई, अगले वर्ष 1931 में गांधी–इरविन समझौते के तहत गांधी जी के पक्ष को सबल बनाने में समर्थन दिया।

1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेकर जेल गयी और गांधी जी के साथ ही आगाखाँ महल में जेल में रखी गयीं।[20] वह पहली महिला राज्यपाल भी बनी। सरोजनी नायडू एक पत्रकार, कवयित्री थी एवम स्त्री स्वतंत्रता की पक्षधर थी। जलियांवाला बाग काण्ड में उन्होंने भी उसके विरूद्ध पम्पलेट बांट कर बम्बई में असहयोग आंदोलन में भाग लिया।

कमला देवी चटोपाध्याय गांधी जी के अहिंसक आंदोलन से जुड़ी महत्वपूर्ण महिला थी। उन्होंने 1930 के नमक सत्याग्रह के दिन कुछ स्वयं सेवकों के साथ बम्बई स्टॉक एक्सचेंज जा कर वहां के लोगो को नमक की छोटी–छोटी पुड़िया बेच कर आजादी की लड़ाई के लिये चंदा एकत्रित किया। ये सभी नमक गैर कानूनी था और देखते–देखते स्टॉक ऐक्सचेंज के लोगो ने खड़े–खड़े 40,000/– रूपये उन्हें दिया। लेकिन पुलिस को इसकी सूचना मिल गयी और कमला देवी को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्होंने अदालत में मजिस्ट्रेट को पुड़िया थमाते हुए उन्हें कहा इसे खरीदो। कमला देवी की निर्भिकता को देखकर मजिस्ट्रेट भी हतप्रभ था। कमला देवी ने दूसरी महत्वपूर्ण घटना को अंजाम दिया जब उन्होंने बर्लिन में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के दिन अपनी साड़ी फाड़कर रातो–रात तिंरगा तैयार किया और सम्मेलन में तिरंगे के साथ उपस्थित हुई, 1927 में कमला देवी ने अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना में अग्रणी भूमिका निभाई और 1930–44 तक लगातार जेल यात्रा करती रही। 1942 में उन्होंने कांग्रेस के स्वयं सेविका का प्रशिक्षण लिया।[21]

नमक सत्याग्रह के दिन देश के विभिन्न भागों में महिला जागरण का बिगुल फूंका गया। स्वतंत्रता संग्राम में एक नया नाम उभरा। यह एक बीस वर्षीय युवती थी दुर्गा बाई। नमक सत्याग्रह में 1930–33 तक उन्हें तीन बार गिरफ्तार किया गया और वह लगातार गांधी जी के आंदोलन से तथा महिला जागृति से जुड़ी रही।[22]

1919 के जलियांवाला बाग हत्याकाण्ड के पश्चात् 9वीं कक्षा में पढ रही सुभद्राकुमारी चौहान ने गांधी द्वारा चालये गये असहयोग आंदोलन में भाग लिया। पति लक्ष्मण सिंह चौहान के सहयोग से वह असयोग आंदोलन में कूद पड़ी और इस दौरान उन्होंने ओजस्वी कवितायें भी लिखी। 14 अगस्त 1923 को जबलपुर में राष्ट्रीय नेताओं के आगमन पर जुलूस में शामिल हुई। 1931–32 में पुनः सत्याग्रह आंदोलन में सक्रिय हुई यद्यपि उनकी मुलकात पहली बार 1932 में गांधीजी से हुई थी किन्तु वो उससे पहले से ही गांधी जी के कार्यक्रमों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही थी। सुभद्रा कुमारी चौहान कवियत्री थी और मित्रवत थी। सुभद्रा चौहान ने 'खूब लड़ी मर्दानी'' जैसी कविता झांसी की रानी पर लिखकर महिलाओ में नई जोश पैदा की। 1941 के व्यक्तिगत सत्याग्रह में भी सुभद्र कु. चौहान शामिल थी। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।[23]

गांधी आंदोलन में जुड़ी नेहरू परिवार की महिलाओं में कमला नेहरू, रामेश्वरी नेहरू तथा इंदिरा गांधी अग्रगण्य थी। गांधी जी ने 1934 में ही रामेश्वरी देवी को हरिजन उद्धार से जोड़कर रखा था। इस दृष्टिकोण में रामेश्वरी देवी हरिजन कल्याण हिन्दी उत्थान जैसे कार्यो में लगी हुई थी।[23]

इस प्रकार, असहयोग आंदोलन के क्षेत्र में सारे देश में उत्तेजना और जोश का माहौल था, हर किसी के मन में कुछ कर गुजरने की तमन्ना थी। ऐसे में जब नमक आंदोलन छिड़ा तो भारत की महिलायें ऊँच–नीच, गरीब–अमीर का भेदभाव छोड़ घर से निकल आयी, इन्होंने जगह–जगह जुलूसों, रैलियों का ताँता लगा दिया। इन स्वयं सेविकाओं में किशोरिया, प्रौढ, वृद्धा और गोद में बच्चे उठाये युवती मातायें भी थी। हर जगह नमक कानून तोड़कर जेल जाने के लिए होड़ लगी हुई थी। बड़ी नेत्रियां गांधीजी के साथ दांडी यात्रा में हो ली थी, तो स्वयं सेविकाएँ जानकी देवी के नेतृत्व में घायलों की सेवा में धरसाना के शिविर में पहुंच रही थी। शेष महिलायें जहाँ थी जिलो, कस्बों, गांवों में सत्याग्राही के रूप में अपनी भागीदारी दर्ज करा रही थी। इस देशव्यापी लहर से प्रभावित उर्मिला देवी मेरठ में सक्रिय हो गयी और सत्याग्रह समिति बनाकर उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में महत्वपूर्ण कार्य किये। मेरठ के नौ–चण्डी मेलों में कपड़ों का बहिष्कार आंदोलन चलाने वाली महिला टोली की कमाण्डर उर्मिला देवी ही थी। गांधी जी के गिरफ्तार होने के बाद ही उन्होंने सत्याग्रह समिति बना ली थी। 300 महिलाओं को संगठित कर उन्होंने टोलियों में बांट कर विभिन्न क्षेत्रों में बांट दिया और उनका संचालन किया। 1932 में वह 6 माह के लिये जेल गयी तब उनके पीछे उनके दो छोटे बच्चे घर में थे। 1941 के व्यक्तिगत सत्याग्रह में अरूणा जी फिर जेल गयी और 1942 के उग्र भारत छोड़ो आंदोलन में यह निर्णय लिया कि '' इस बार भूमिगत रहकर काम करूँगी, जेल नहीं जाँऊगी'' उन्होंने जो कहा कर दिखाया।

आंदोलन के प्रारंभ में ही सभी बड़े नेता जेल में बंद कर दिये गये।[24] 8 अगस्त, में जब बम्बई कांग्रेस में भारत छोड़ो का प्रस्ताव पारित किया गया तो अरूणाजी सभा स्थल पर उपस्थित थी, उस रात गांधी, नेहरू, सरदार पटेल, सरोजनी नायडू समेत सभी बड़े नेता जेल में डाल दिय गये थे। अगली सुबह सरकारी इमारतों पर तिरंगा फहाराने का कार्यक्रम आंदोलन शुरू करके अरूणा जी भूमिगत हुई और अंत तक ही अनेक कठिनाईयों को झेला। गांधी

जी के कहने पर भी बाहर नही आयी तथा पुलिस के हाथों गिरफ्तार भी नही हुई। सही मायने में उन्होंने गांधी जी का नारा '' करो या मरो'' सार्थक कर दिखाया। उनके भूमिगत कार्यक्रम की कहानी बहुत रोमांचक है तभी उन्हें 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन की नायिका कहा जाता है।[25]

1940–42 तक आंदोलनकारियों ने बड़ी संख्या में भारत के विभिन्न प्रांतो की महिलायें शरीक थी, जिसमें बड़ी संख्या में छात्राये, प्रौढ महिलाओं की भागीदारी थी। पंजाब से बीबी अमर कौर, पुष्पा गुजराल, लाहौर से सीता देवी, अमृतसर की भागवती, रावलपिण्डी की सावित्री सूरी, अम्बाला की चितकौर, रोहतक की दुर्गादेवी, फिरोजपुर की हरकौर, लुधियाना की अमर कौर, बरनाला की हरनाम कौर, जालंधर की हरपालकौर, सोनपत की छन्नादेवी जैसी महिलायें थी। किसान आंदोलन में शरीक हरकौर, हरभजन कौर और ईश्वर कौर महत्वपूर्ण थी। इन महिलाओ को ढाई साल तक की सजा मिली थी। बंगाल से इस आंदोलन में कनकलता बरूआ को 2 साल की सजा हुई थी। गाजीपुर की राधिका देवी, बलिया की कुठजानकी और जमुनामाली जैसी महिलायें इस दौर में पुलिस के जुर्म का शिकार हुई थी। बनारस डिविजन में भाग लेने वाली महिलाओं की संख्या 16 थी। इनमें से मिर्जापुर की श्रीमती राजेश्वरी देवी और बनारस की देवकलां को 2–2 वर्ष की सजा मिली थी। बलिया की पार्वती को 18 और जिनसा देवी को 15 तथा शेष को 6 महीने की सजा मिली थी। गोरखपुर के एक गांव के झिनिया धोबन को गोली मार कर उसका घर जला दिया गया था। वह भाग कर नेपाल में भूमिगत हुई थी तथा लौटने पर 6 माह की सजा हुई। झांसी डिविजन में 13 महिलाओं के नाम मिले हैं जिनमें हमीरपुर की सरस्वती देवी, केशरदेवी जैसे लोगो को 3 साल की कैद हुई। अलीगढ़ में सूरज कु. कृष्णादेवी और हेमलता देवी को 10–10 माह की नजरबंद सजा मिली थी। गंगादेवी नामक महिला की 3 माह की बच्ची इस दौरान जेल में मरी थी। उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा और नैनिताल में भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने वाली महिलाओं की संख्या 11 थी। इस क्षेत्र में विनोबा भावे की विदेशी शिष्या सरलावेन, आगरा, मथुरा, मेरठ आदि से अग्रणी महिलाओं में आंनदी देवी को 18 महीनों की, सरोज कुमारी, विजय कुमारी, रूपवती, कमला देवी को 1–1 वर्ष की कैद मिली थी। मध्यप्रांत की महिलाओ ने भी खुलकर भाग लिया था। वे दफ्तरों में जाकर अधिकारियों को रस्सी बांधकर उन्हें कार्यालय छोड़ने को बाध्य करती थी। इस दौरान अनेक महिलाओं को बलात्कार का शिकार भी होना पड़ा था। बांदा जिले में सिपाहियों के हाथों बलात्कार की शिकार महिलाओं की चर्चा मनमंथ नाथ गुप्त ने की है।

मध्यप्रांत में सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाम अनुसूइया बाई काले का था जो 1940–42 के आंदोलन में सक्रिय थी। 1942 के आंदोलन मे जबलपुर में सुभद्रा कुमारी चौहान प्रसिद्ध थी। अकोला की राधा देवी गोनका, सागा की सहाद्रा बाई, इंदौर की रूकमणी देवी, सरस्वती करवे भोपाल की, श्रीमती परिहार नागपुर की, सुमनबाई केलकर, बिमला बाई देशपांडे वर्धा की, जानकी देवी बजाज इत्यादि महत्वपूर्ण थी। इसी प्रकार महाराष्ट्र के नासिक और विभिन्न जगहों से व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेने वालों की संख्या काफी बड़ी थी। गुजरात में भी बड़ी संख्या ने महिलाओं ने 1930 और 1942 के आंदोलन में भाग लिया था।[26]

कस्तूरबा गांधी न सिर्फ महात्मा गांधी की अर्धांगिनी थी बल्कि सच्ची देशभक्त और आंदोलनकारिणी थी। गांधी जी के गिरफ्तार होने के बाद उनके पीछे–पीछे आगा महल में पहुंची जहां उन्हें गिरफ्तार किया गया और उनके साथ 21 माह तक आगा खाँ महल में रही। आगा खाँ महल में 22 फरवरी 1944 को कस्तूरबा की जेल में मृत्यु हो गयी थी। गाधी जी की पुत्री तुल्य सेक्रेटरी डॉ. सुशीला नैय्यर भी गिरफ्तार हुई थी।

गांधी के हाथ मजबूत करने मे मृदुला सारा भाई, पुरूषोत्तम नौरोजी, गांधी जी की विदेशी शिष्या मीरा बेन, मच्ची भाई पटेल के साथ–साथ तैयबजी की पुत्री रेहाना बहन, पंजाबी महिला अपतुप्त लाल बहन, इंदुमती चिमन लाल, काशी बहन पुरूषोत्तम दास पटेल, निर्मला बहन, प्रभावती बहन जैसी सैकड़ो नाम मौजूद है।

बिहार भी 1942 के आंदोलन में अग्रणी था। बिहार में फुलोना प्रसाद की पत्नी तारा रानी श्रीवास्तव तथा रांची, दरभंगा तथा पटना मे अनेक महिलाओं ने भाग लिया, हजारीबाग की सरस्वती देवी के नेतृत्व मे जूलूस निकाला। गांव लम्हारी, शाहबाद के गोपाल दुसाध की पत्नी अकली देवी अपने गांव में गोली का शिकार हुई मुंगेर में फुटा गोप की पुत्री धतूरी देवी भी पुलिस गोली का शिकार हुई। इसी प्रकार वेलक्षी में सुखदेव शर्मा की पुत्री सुधाशर्मा अपनी माँ के साथ जेल गई और बॉकीपुर जेल में मृत्यु हुई। छपरा की रामस्वरूप देवी भी 1942 में पुलिस गोली से शहीद हुई। इस प्रकार बिहार में सभी वर्ग की महिलाओं ने 1942 को आंदोलन में भाग लिया।[26]

उड़ीसा में यही कहानी दोहराई गई। तालचर से लेकर के उड़ीसा के विभिन्न भागों में अनेक आंदोलनकारियों ने 1942 के आंदोलन में अभूतपूर्व प्रदर्शन किया।

राजस्थान में 1942 में भाग लेने वाली महिलायें थी, शकुंतला देवी, नारायणी देवी, धीरूभाई देवी इत्यादि।

अरूणा आसफ अली का नाम 1942 की क्रांति के साथ जुड़ा है। वहीं दूसरा नाम है, श्रीमती सुचेता कृपलानी का। 1940 में गांधी जी के व्यक्तिगत सत्याग्रह में गिरफ्तार हुई और 1942 में भूमिगत आंदोलन का संचालन किया। 1942 में बंगाल की दो प्रमुख नेत्रियों का नाम लिया जाना आवश्यक है। जिसमें पं. बंगाल की 16 वर्षीय कनकलता ने अपनी शहादत देते हुए भारतीय ध्वज फहराया था। दूसरी, महत्वपूर्ण महिला है मातंगीनी हजरा जो 1942 के आंदोलन में बंगाल के मिदनापुर क्षेत्र में सबसे आगे थी। नेतृत्व के समय मातंगीनी 73 वर्ष की थी। पुलिस ने बानकपुर के पास मांतगिनी हजरा पर लाठी चार्ज किया था। फिर भी भीड़ का नेतृत्व करते हुए मांतगिनी तिरंगा थामें रही और अंततः उसने तिरंगा फहराकर इतिहास में अपना नाम अमर किया।[26]

1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान पत्रकारिता से जुड़ी महिलायें 1942 की क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही थी। इस दौरान भूमिगत प्रसारण में पहल करने वाला एक भूला बिसरा किन्तु एक महत्वपूर्ण नाम है उषा मेहता। भारत में दूरदर्शन से पूर्व रेडियों ही जन–जन तक संदेश पहुंचाने वाला एक प्रभावशाली संचार माध्यम था।

सुश्री उषा मेहता ने भूमिगत रेडियो प्रसारण की स्थापना कर न केवल जन–जन तक संदेश पहुंचाया बल्कि अल्पायु में जोखिम भरे कदम उठाकर सफलता पूर्वक अंजाम भी दिया। 1942 के आंदोलन के अवसर पर पढ़ाई छोड़कर आंदोलन में कूद पड़ने वाली उषा मेहता एम.एम. की छात्रा थी। उन्हें भूमिगत आंदोलन के जुर्म में जेल में रखा गया था और 4 साल की कड़ी सजा भी सुनाई गयी थी। 1946 में रिहा होने के पश्चात् सुश्री मेहता ने अपना अध्ययन आगे बढ़ाया एम.ए. किया तथा ''महात्मा गांधी की सामाजिक और राजनीतिक विचाराधरा'' पर शोध कर डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। तत्पश्चात् वह नागरिक प्रशासन विभाग में व्याख्याता नियुक्त हुई।

पंडित जवाहर लाल नेहरू की भांजी और श्रीमती विजयलक्ष्मी की पुत्री नयनतारा सहगल यद्यपि विदेशो में पढ़ी थी पर गांधी जी का उन पर अमिट प्रभाव था उन्होनें लिखा है कि '' हम स्कूल में अंग्रेजी पर घर में हिन्दी में बोलते थे। घर के बड़े लोग पश्चिमी सभ्यता के अनेक चीजों के प्रशंसक थे पर स्वतंत्रता सेनानी होने के नाते हम पूरी तरह भारतीय थे और भारतीय संस्कृति से लगाव रखते थे।'' उन्होंने लिखा है कि गांधी जी ने हमें यह पाठ पढ़ाया था कि जो भी काम है सच्चाई से करना है। इसी प्रकार

गांधी भक्त विनोबा भावे की शिष्या निर्मला पाण्डे ने 1942 के आंदोलन में जब वह मात्र 13 वर्ष की छात्रा थी तो जुलूस में भाग लिया।

दक्षिण भारत में 1942 में छात्राओं ने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया था। मैसूर में आंध्रा में महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। तमिलनाडू में रूक्मिनी लक्ष्मीपति, अम्मू, स्वामीनाथ, डॉ. मुथु लक्ष्मी रेड्डी जैसी ख्याति प्राप्त नेत्रियों के अलावा दक्षिण के अन्य अग्रणी महिलायें थी। मैसूर की लक्ष्मि, आंध्रा की लक्ष्मीबाई संगम, लक्ष्मीकांताम, शकुंतला शंकर, केरल की श्रीमती पदमासनी अम्माल, अक्कामा बलके जैसी महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

गांधी जी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी इतनी सशक्त रही है कि हर वर्ग जाति, धर्म और क्षेत्र की महिलाओं ने गांधीजी के सभी राजनीतिक और सामाजिक आंदोलनों में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया था। जलियांवाला बाग काण्ड के पश्चात् 1920 के असहयोग आंदोलन, 1940–41 का व्यक्तिगत सत्याग्रह और 1942 का भारत छोड़ो आंदोलन में भारतीय महिलाओं की भागीदारी उत्तरोतर बढ़ती ही गयी थी। 1930 के नमक सत्याग्रह आंदोलन में महिलाओं ने जिस तरह के साहस का परिचय दिया और 1942 के 'करो या मरो' आंदोलन में जिस निर्भिकता से जेल और शहादत स्वीकार की वह विश्व के इतिहास में अत्यंत उज्ज्वल और अस्मरणीय है। भारतीय नारी ने यह सिद्ध किया कि वह एक बहादुर माता, एक वीर पत्नी और एक निर्भिक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में अपनी पहचान बनाने में सक्षम रही। आज भी हजारों ऐसे नाम है जिनके बारे इतिहास नहीं जनता है। उन भूले–बिसरे क्रांतिकारियों, समाजसेवियों और अहिंसा के पथ पर मर–मिटने वाली महिलाओं के संदर्भ में प्रमुखता से लिखे जाने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

नारी जागरण में समाज सुधारकों का योगदान पर विस्तृत अध्ययन किया गया है। समाज सुधारकों का योगदान अत्यंत ही उच्च रहा, क्योंकि सारी समाज सुधारक संस्थाये इन्होंने ही तो बनाई थी और महिलाओं की दयनीय स्थिति की ओर सबसे पहले इन्ही का ध्यान गया। नारी की दयनीय स्थिति को उन्होनें विस्तार से लोगों के सामने रखा और दूसरे देशों की तुलना के साथ और स्वयं भारतीय इतिहास के प्राचीन इतिहास के पन्नों में दर्ज उच्च स्थिति से समाज को अवगत कराकर उन्होनें स्पष्टता तथा महिलाओं की दयनीय स्थिति को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया। नीरा देसाई जैसा कि लिखती है कि उस दौर में इन समाज सुधारको की सोच क्रांतिकारी थी और इन्होंने महिलाओं के सम्पूर्ण उत्थान के लिये एक ऐसा माध्यम अपनाया और महिलाओं के अधिकारों के लिये जिन अधिकारों की मांग उन्होंने की वे अधिकार पूरी तरह से न केवल क्रांतिकारी थे वरन् विश्व के किसी भी देश में ऐसे अधिकार नारियों को नहीं मिले हुए थे।

सन्दर्भ

1. शिवनाथ शास्त्री, पृ. 99।
2. शान्ति स्वरूप बौद्ध – सावित्री बाई फुले , सम्यक प्रकशन, द्वितीय सं. 2006, पृ. 42
3. डॉ. के. एम. मालती – स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य, पृ. 32
4. डॉ. के. एम. मालती – स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य, पृ. 33
5. डॉ. रघुवंश (भूमिका) महर्षि दयानन्द – (यदुवंश सहाय), लोक भारती, इलाहाबाद . 2000, पृ. 19
6. पॉल 2003, पृ. 51
7. बद्रीनाथ 2006, पृ. 31
8. निखलानंद, 1964
9. प्रव्राजिका आत्म प्रज्ञा सिस्टर निवेदिता, रामकृष्ण पेठ, नागपुर, 2001, पृ. 32
10. डॉ. के.एम. मालती स्त्री विमर्शः भारतीय परिप्रेक्ष्य में, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 48
11. हिरण्यम् बनर्जी – ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, साहित्य अकादमी, 2014, पृ. 67–68
12. कल्पना गांगुली – झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 86
13. पंडिता रमाबाई – हिन्दू स्त्री का जीवन (अनु. शंभु जोशी) संवाद प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 112
14. डॉ. के.एम. मालती – स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य में, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 37
15. दीपान्विता मणि – महिला आन्दोलन के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रमुख बिन्दु लेख, स्त्री अस्मिता : साहित्य और विचारधारा, संपादक जगदीश चतुर्वेदी आनन्द प्रकाशन कलकत्ता 2002, पृ. 475
16. वीरेन्द्र सिंह यादव – 21वीं सदी का महिला सशक्तिकरण : विकास एवं यथार्थ, ओमेगा पब्लिकेशन, दिल्ली, प्र.संस्करण, 2010, पृ. 310
17. मेरे सपनों का भारत, चौथा संस्करण, 1995 पृ. 243–45
18. डॉ. एन. राधाकृष्णनन – महात्मा गांधी और सामाजिक न्याय, पृ. 119
19. मेरे सपनों का भारत, पृ. 240
20. स्वामी गंभरानन्द – श्रीमती शारदा देवी, पृ. 73
21. राधा कुमार – स्त्री सघर्ष का इतिहास, पृ. 145
22. उदयराज सिह – सामाजिक क्रान्ति के दस्तावेज, पृ. 776
23. अमृतलाल नागर – आंखों देखा गदर – वर्तमान साहित्य, नवम्बर–दिसम्बर, 2006, पृ. 48
24. डॉ. के.एम. मालती – स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य में, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 142
25. वीरेन्द्र सिंह यादव – 21वीं सदी का महिला सशक्तिकरण : मिथक एवं यथार्थ, ओमेगा पब्लिकेशन दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2010
26. राधा कुमार – स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली,।